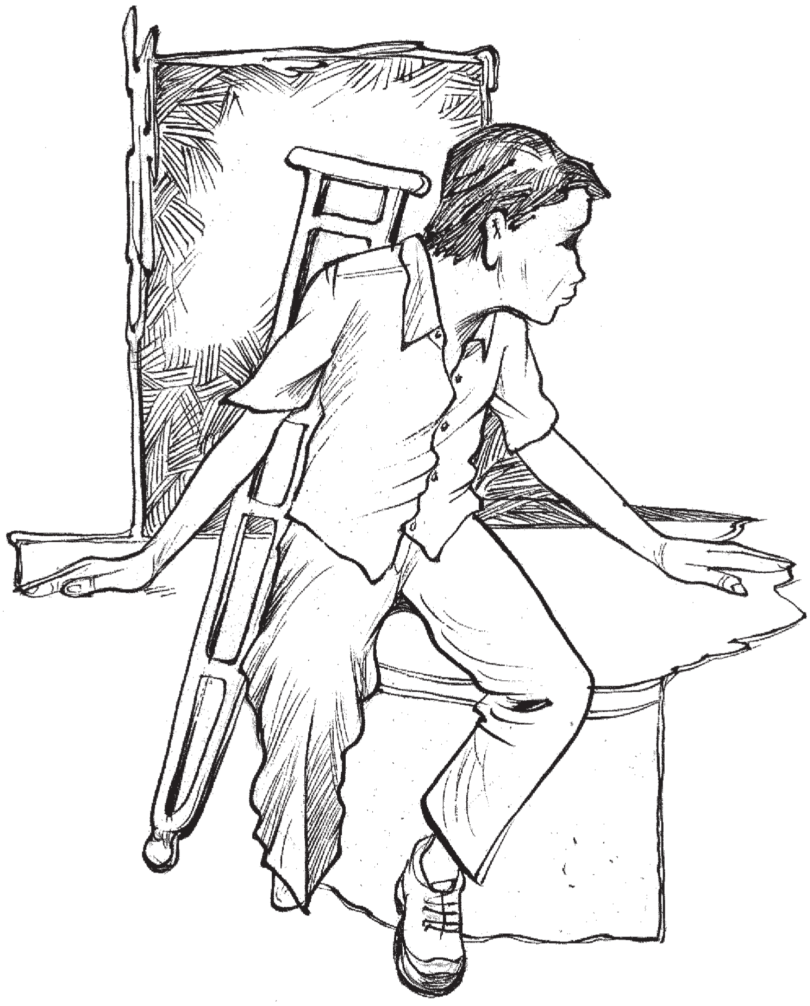
नए समाज की परिकल्पना

✍ रमा कांत अग्निहोत्री

इतिहास इस बात का गवाह है कि हमने सदियों से अपने समाज की रचना एक 'सामान्य व्यक्ति' की छवि को सामने रखते हुए की है। हम यही समझते हैं कि समाज में अलग–अलग तरह की परेशानी केवल 'विकलांग' लोगों को ही होती है। हम यह नहीं सोचते कि किसी–न–किसी अर्थ में, चाहे वह शारीरिक हो या मानसिक, हर व्यक्ति किसी–न–किसी दृष्टि से विकलांग ही है। क्या कोई भी छोटा बच्चा या बच्ची या कोई भी बुजुर्ग पुरुष या महिला हमारे 'सामान्य व्यक्ति' की छवि से कुछ अलग नहीं है? क्या यह सच नहीं कि हम सबको हर वक्त किसी–न–किसी अन्य व्यक्ति की आवश्यकता रहती है। क्या हम कभी ऐसे समाज की परिकल्पना कर सकते हैं जिसमें हर व्यक्ति को समुदाय के किसी अन्य व्यक्ति की आवश्यकता न हो। इसके बावजूद भी हम अपने समाज एवं उसकी इमारतों तथा अन्य प्रसाधनों को इस तरह से बनाते हैं कि उनका इस्तेमाल चंद लोग ही कर सकते हैं।

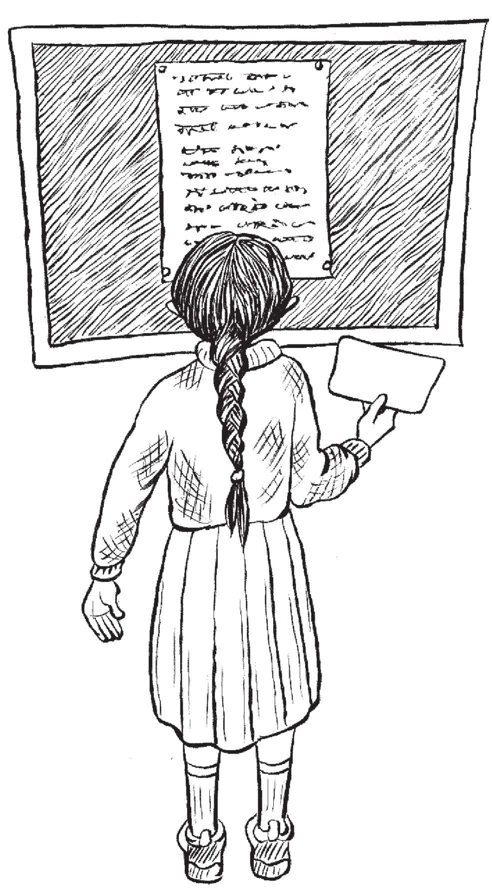


यह समझना बड़ा मुश्किल है कि हमने ऐसे समाज की रचना क्यों की जहां एक विशेष किस्म के विकलांगों की एक अलग सूची बनी और उनके लिए 'सामान्य व्यक्ति' की छवि में बने हुए समाज में एक आम आदमी की तरह जीना संभव ही नहीं। हमारी हर नीति और हर कार्यक्रम एक ही दृष्टिकोण से ओत–प्रोत रहता है और वह दृष्टिकोण है दया भावना का। किसी नेत्रहीन को या किसी ऐसे व्यक्ति को जो व्हील चेयर पर हो, देखकर हमारे मन में केवल एक ही भावना आती है; इस आदमी की मदद कर दें और इसे किसी तरह से सड़क पार करा दें। जैसे सड़क पार करने के बाद उस व्यक्ति को जीवन जीना ही नहीं है। हम यह क्यों नहीं सोचते कि हमारी इमारतें, हमारी सड़कें, हमारे स्कूल एवं हमारे दफ्तर ऐसे हों जिनका इस्तेमाल हर व्यक्ति कर सके, चाहे वह तथाकथित सामान्य हो या तथाकथित विकलांग। यह बात समझना तो बहुत सरल लगता है कि हर व्यक्ति किसी–न–किसी तरह से परेशान है, चाहे वो शारीरिक कारण हो चाहे मानसिक। किसी को दिल की बीमारी है तो किसी को सांस चढ़ जाती है, किसी को ब्लड प्रेशर है तो किसी को

डाइबिटीज। किसी का वजन बहुत ज्यादा है तो किसी का बहुत कम। कोई भय से ग्रसित है तो कोई मदिरा से। कोई संज्ञानात्मक विकार से पीड़ित है तो कोई अवसाद (डिप्रेशन) से। कोई उत्पीड़न भ्रांति से ग्रसित है तो कोई बाइपोलर होने की समस्याओं से। अगर आप एक पल के लिए अपने बारे में या किसी भी ऐसे व्यक्ति के बारे में सोचें जिसे आप अच्छी तरह से जानते हैं तो आप पाएंगे कि हर व्यक्ति किसी–न–किसी समस्या से ग्रसित है। अगर एक पल के लिए यह मान भी लें कि अभी आपको ऐसा नहीं लग रहा तो इसमें भी कोई शक ही नहीं कि ऐसा दिन बहुत जल्दी आएगा जब आपको ऐसा लगने लगेगा।

हमारे देश में कोई सड़क ऐसी नहीं जिस पर कोई व्यक्ति जिसे हमने 'विकलांग' की श्रेणी में रख दिया है चल पाए, कोई ऑफिस ऐसा नहीं जिसमें वे काम कर पाएं, कोई शौचालय ऐसा नहीं जिसको वो इस्तेमाल कर पाएं, कोई किताब ऐसी नहीं जिसे वो आसानी से पढ़ पाएं। हमें आज तक यह भी समझ नहीं आया कि इस वर्ग के लोगों को हम कैसे संबोधित करें। कभी तो हम उन्हें अंधे, लूले–लंगड़े या गूंगे–बहरों की संज्ञा देते हैं। कभी उन्हें विशेष आवश्यकताओं वाले लोग कहते हैं तो कभी विशेष क्षमताओं वाले। कभी विकलांग तो कभी अलग तरह से सक्षम। जबकि हम यह अच्छी तरह से जानते हैं कि एक नेत्रहीन व्यक्ति या एक गूंगा–बहरा व्यक्ति या कोई लूला–लंगड़ा व्यक्ति उन लोगों से बहुत आगे निकल सकता है जिन्हें हम 'सामान्य' की संज्ञा देते हैं।

आजकल समावेशी (इन्क्लूसिव) शिक्षा एवं समाज की बहुत चर्चा हो रही है। यानी यह कहा जा रहा है कि हमारी कोशिश तथाकथित विकलांग लोगों को अपने स्कूलों और समाज में सम्मिलित करने की होनी चाहिए। प्रश्न यह है कि हम लोग तथाकथित विकलांगता को एक नए समाज की परिकल्पना का आधार क्यों नहीं बनाते। हर वो सड़क जिस पर 'विकलांग' व्यक्ति चल सकता है उस पर तथाकथित सामान्य व्यक्ति तो चल ही सकता है। जिस ऑफिस का प्रयोग तथाकथित विकलांग व्यक्ति कर सकता है उसका प्रयोग आम आदमी तो कर ही सकता है। जिस शौचालय में व्हील चेयर जाने की व्यवस्था है या जिसमें नेत्रहीन व्यक्ति जा सकता है उसमें हमारी छवि का सामान्य व्यक्ति तो जा ही सकता है।



हर स्कूल में, हर ऑफिस में, हर बात को साइन लैंग्वेज में कहने की व्यवस्था होनी चाहिए। साइन लैंग्वेज में वो सब बातें हैं जो किसी भी अन्य भाषा में होती हैं। बहुत से लोग तो दुर्भाग्य से यही समझते हैं कि गूंगे और बहरे लोग केवल इशारों से ही बातचीत करते हैं। क्योंकि वो सुन नहीं सकते इसलिए लोग कहते हैं वो बोल कैसे सकते हैं। यह तो सही है कि ये लोग बोल नहीं सकते पर यह बिल्कुल गलत है कि इनके पास अपनी भाषा नहीं होती। साइन लैंग्वेज का भी अन्य भाषाओं की तरह अपना व्याकरण होता है और अपना शब्दकोश। इसमें कोई शक नहीं कि ये वाक्य हाथों की आकृतियों एवं चेहरे के हाव–भाव की मदद से बनते हैं। किसी भी भाषा का अनुवाद साइन लैंग्वेज में हो सकता है। ठीक वैसे ही जैसे कि साइन लैंग्वेज का अनुवाद किसी भी भाषा में हो सकता है।

आधुनिक तकनीकी आविष्कारों ने हमें एक नए समाज की परिकल्पना एवं उसको साकार करने के सबल साधन दिए हैं। अगर उनकी मदद से भी हम ऐसा समाज नहीं बना सकते जिसमें तथाकथित विकलांगों को अलग–अलग



श्रेणियों में न रखना पड़े तो यही कहना पड़ेगा कि हमारी रुचि उसी सामान्य व्यक्ति में है जो वास्तविकता में कहीं होता नहीं। नेत्रहीनता या देखने की अन्य कमजोरियों वाले लोगों के लिए एक आम कंप्यूटर बहुत आसानी से वह सब काम कर सकता है जो हम एक–दूसरे के लिए करते हैं या जिनके लिए हम अलग–अलग तरह की पठन सामग्री का उपयोग करते हैं। इसके लिए दो बहुत ही सरल काम करने की आवश्यकता है। पहला तो यह है कि जो कुछ भी बोला या लिखा जाए वह डिजिटल फॉर्म में भी उपलब्ध हो। दूसरा यह है कि हर कंप्यूटर पर 'जावा' जैसे कंप्यूटर प्रोग्राम उपलब्ध हों। इलेक्ट्रॉनिक ब्रेल प्रिंटर से ठीक वही काम लिया जा सकता है जो हम लोग जिरॉक्स मशीन से लेते हैं। यदि हर जगह ये छोटी–छोटी चीजें उपलब्ध हों तो नेत्रहीन या नजरों से कमजोर बच्चों के लिए कोई अलग श्रेणी बनाने की आवश्यकता ही नहीं है। ऐसे कंप्यूटर अब आम हैं जो वह सब कुछ बोलते हैं जो उन पर छपा होता है। कंप्यूटर की मदद से किसी भी नेत्रहीन के लिए यह कोई मुश्किल काम नहीं है कि वह किसी भी किताब का जो डिजिटलाइज हो चुकी है, कोई भी पन्ना जब चाहे पढ़ सकता है। ब्रेल किताबें भी अब बहुत आसानी से बनाई जा सकती हैं। उन बच्चों या व्यक्तियों के लिए जिन्हें सुनने या बोलने की कोई परेशानी है, कई तरह की तकनीकी चीजें सामने आ चुकी हैं। अभी तक साइन लैंग्वेज का उपयोग केवल खबरें सुनाने या चंद भाषणों के अनुवाद के लिए ही होता है। यदि इसका उपयोग संप्रेषण के हर संदर्भ में होने लगे तो गूंगे–बहरों की अलग श्रेणी बनाने की कोई आवश्यकता नहीं है। इसी प्रकार यदि हम अपनी सड़कों, भवनों एवं शौचालयों को थोड़ी संवेदनशीलता से देखें तो कोई कारण नहीं कि शारीरिक रूप से विकलांग बच्चे या वयस्क स्वयं को किसी भी चीज से वंचित पाएं।

प्रश्न दया करने का नहीं है, प्रश्न है एक खास किस्म की सोच को बदलने का। जिन लोगों को हमने अपनी अज्ञानता के कारण विकलांगों की श्रेणी में रखा है उन्हें हमारी दया और छात्रवृत्तियों की आवश्यकता नहीं है। आवश्यकता है कि हम संवेदनशीलता से एक नए समाज की रचना करें। क्या हम लोग सचमुच एक प्रजातांत्रिक एवं न्याय संगत समाज में विश्वास रखते हैं? यदि यह हमारा संकल्प है तो इस तरह के समाज की रचना में जहां तथाकथित सामान्य एवं तथाकथित विकलांगों को अलग–अलग श्रेणी में रखने की कोई आवश्यकता नहीं, कोई परेशानी नहीं।

रमा कांत अग्निहोत्री : दिल्ली विश्वविद्यालय में भाषा विज्ञानी के रूप में लंबे समय तक कार्य करने के बाद आजकल विद्या भवन से संबद्ध। विद्या भवन तथा अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय की संयुक्त पत्रिका 'लैंग्वेज एंड लैंग्वेज टीचिंग' के एक संपादक हैं।